आठवीं गाथा की टीका चलती है न ? यहाँ आया है, शिष्य को गुरु ने आत्मा शब्द कहा तब आत्मा का अर्थ नहीं समझने से गुरु के सन्मुख आंख फाड़कर टकटकी लगाकर (आत्मा का) क्या अर्थ है ? समझने की जिज्ञासा में खड़ा है। आहाहा !

उसमें गुरु ने कहा कि आत्मा किसको कहते कि स्वयं व्यवहार मार्ग में रहते हुये - ऐसा कहा न ? उपदेश देने को विकल्प में आते है न, यहाँ बात छद्मस्थ मुनि की है न ? आहाहाहा ! धर्म समझने को आया हैं और उसका प्रश्न है कि तुम आत्मा कहते हो, तब आत्मा क्या कहलाती है ? प्रश्न भले न किया परंतु उसकी दृष्टि वहाँ लगी है कि आप आत्मा क्या (किसे) कहते हैं ? उसका अर्थ कहकर शब्द का अर्थ बताया, (जो) दर्शन-ज्ञान-चारित्र को प्राप्त हो। आहाहा ! आत्मा जो अंदर है वह दर्शन-ज्ञान-चारित्र, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्र को प्राप्त हो, सदा प्राप्त हो, फिर हिन्दी में विशेष लिखा है, उसका अर्थ यह बहुत संक्षिप्त भाषा में (कहा) छह द्रव्य की यहाँ बात है नहीं, आत्मा अर्थात दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो निर्मल पर्यायरूप परिणमित हो यह आत्मा, बहुत सूक्ष्म बात की है इसमें। आहाहा ! गुरु ने कहा और उसने ध्यान से सुना।

ऐसी बात कहीं अन्यथा नहीं, दिगम्बर संतों के अतिरिक्त... यह कोई गजब बात है, यह बात संप्रदायवालों को खबर नहीं, जिसके घर में है, हाँ ! तुम्हारे तो घर

में है। आहाहा !

क्या कहते हैं देखो ! ओहोहो ! कहीं छःद्रव्य की बात नहीं की, गुरु ने तो आत्मा शब्द लिया कहा है बस, कारण कि आत्मा जानेगा तब छह द्रव्य, `एयं जाणहि सो सव्वं जाणहि,' वह सर्व जानने में आयेगा, तब एक आत्मा कहा तथा श्रोता भी अकेला आत्मा क्यों कहते हैं ? छः द्रव्य क्यों नहीं कहते - ऐसा (प्रश्न) नहीं (किया)। सुननेवाले को भी जिज्ञासा रुचि यह क्या कहते हैं बस यही बात (है), आत्मा किसे कहते हैं ? आहाहा ! कहनेवाले भी मात्र आत्मा कहते हैं और सुननेवाला भी आत्मा क्या है यह समझने एक जिज्ञासा है। आहाहा !

गुरु ने छह द्रव्य नहीं कहे और शिष्य ने प्रश्न भी नहीं किया कि आप आत्मा कहते हो परंतु छह द्रव्य तो कहो ? नम्र विनयवंत है, आप आत्मा किसे कहते हैं ? क्योंकि आत्मा की पर्याय में छह द्रव्य तो जानने में आ जाते हैं, ऐसी पर्याय की ताकत है, अर्थात यहाँ छह द्रव्य को जानने का प्रश्न नहीं किया, यहाँ तो आत्मा कहा। आहाहा ! तब उसने इतना कहा है भेद द्वारा कथन करके दर्शन-ज्ञान-चारित्र सो आत्मा, अंतर में उसकी प्रतीतिरूप दर्शन उसका ज्ञान उसकी रमणता उसे प्राप्त हो। आहाहाहा ! उसे आत्मा कहते हैं।

शिष्य ने - ऐसा जब अर्थ सुना... यहाँ तो ऐसी ही तैयारीवाला शिष्य लिया है, आहाहा ! दिगम्बर संतों की कथनी, स्वयं की तैयारी बहुत है, परंतु सुननेवाला भी तैयारीवाला लिया है। आहाहा ! नेमिचन्द्रभाई ! ऐसी बात है बापू ! यह कहानी किस्सा नहीं, यह तो वीतराग का अंतरंग पेट है। जिनेश्वर देव त्रिलोकनाथ आत्मा किसे कहते हैं, यह आचार्य अपने शब्दों में कहते हैं। प्रभु ! एक बार सुनो (तो) यहाँ आत्मा इसको कहते हैं कि जो सम्यग्दर्शन, विश्वास जो करता है..... ज्ञान करता है और चारित्र को प्राप्त हो, वह आत्मा, तब उसका अर्थ इनको प्राप्त हो उस पर तुम्हारा लक्ष्य नहीं, सुननेवाले का लक्ष्य यह आत्मा प्राप्त हो कौन ? आत्मा ? किसे ? कि दर्शन-ज्ञान-चारित्र को, तब उसका लक्ष्य द्रव्य ऊपर जाता है। समझ में आया ?

क्या कहा... यह तो अध्यात्मवाणी है बापा ! आहाहाहा ! भाग्यवान को सुनने मिले ऐसी बात है। ओहोहो ! - ऐसा कहा प्रभु, हम इसको आत्मा कहते हैं, कि जो श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र को प्राप्त हो - ऐसा नहीं कहा कि, पर का कर्त्ता हो वह आत्मा - ऐसा नहीं कहा कि रागरूप परिणमे, देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा (करे) वह आत्मा - ऐसा नहीं कहा। आहाहा ! तथा तीन बोलरूप परिणमे, है तो पर्याय भेद, परंतु यह अभेद आत्मा वस्तु तीनरूप परिणमे वह आत्मा, तब श्रोता का लक्ष्य तीनरूप परिणमनेवाला द्रव्य है, आत्मा है, उसके ऊपर दृष्टि जाती है, ***भेद ऊपर...***

भेद से कहा, परंतु कहनेवाले को भी भेद का अनुसरण नहीं, और सुननेवाले को भी भेद का अनुसरण नहीं। मोटानी ! ऊँची बात है यह। आहाहा ! शिवलालभाई ! - ऐसा कहते हैं।

आत्मा अर्थात जो दर्शन-ज्ञान-चारित्र के भावरूप, पर्यायरूप परिणमे, प्राप्त हो - यह आत्मा भेद करके आचार्यने कहा तो आत्मा, भेद करके बताया तो आत्मा (परंतु) भेद से तो बताया, भेद को बताना नहीं, भेद से अभेद को बताना है आहाहाहा ! समझ में आया ? बहुत (गंभीर) ऐसी बात तो कहाँ ? आहाहा ! क्या कहते हैं ? कहते हैं कि प्रभु, हम किसे आत्मा कहते हैं, कि जो दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप... रागरूप परिणमे वह आत्मा, यह बात निकालदी, व्यवहारपने परिणमे यह बात तो है ही नहीं, मात्र दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप परिणमे वह आत्मा, जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा... यहाँ दर्शन, ज्ञान, चारित्र को बताना नहीं, दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप को प्राप्त हो वह आत्मा, बताना है (आत्मा) आहाहाहाहा !

समझ में आये उतना समझना बापू यह तो अलौकिक बाते हैं, त्रिलोकनाथ जिनेश्वरदेव उनकी वाणी अरे यह कहीं जगत में है नहीं। आहाहा ! पर समझनेवाले लोग भी बहुत कम हैं। कि दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह दर्शन, ज्ञान, चारित्र - ऐसा नहीं कहा। दर्शन, ज्ञान और चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा अर्थात वहाँ दृष्टि आत्मा ऊपर लगाना है, भेद ऊपर नहीं। भेद से समझाया परंतु अभी कहेंगे, ***हमने भेद से समझाया परंतु हमको भी भेद का अनुकरण अनुसरण करना नहीं, और तुम्हें भी हमने भेद से समझाया, परंतु हमने तुम्हें समझायी अभेद चीज है जो अंदर वह भगवान आत्मा स्थित है उसको, तो तुम्हें भेद का अनुसरण करना नहीं, परंतु जो भेदरूप परिणमता है वह कौन ? कि आत्मा।*** आहाहाहा !

यहाँ श्रोता को और वक्ता को दोनों को ही भेद से कहते हैं और वह भेद से सुनते हैं परंतु सुनने में (- ऐसा लगे) भेदरूप परिणमते है वह आत्मा, बताना है आत्मा, भेदरूप परिणमे वह आत्मा बताना नहीं। आहाहाहाहा ! इतने शब्दों में कितना भाव भरा है, दिगम्बर संतो की वाणी, आहाहा ! जगत इनके सामने भरे पानी, क्यों नरेशजी। आहाहा ! प्रभु यह तो शांति की बात है नाथ, यह कोई पक्ष की बात नहीं है, जैन दर्शन कोई पक्ष नहीं, यह तो वस्तु का स्वरूप है। आहाहा ! यह स्वरूप है यह आत्मा। आहाहा ! क्योंकि वस्तु आत्मा यह जिनस्वरूप है '**घट घट अंतर जिन बसे घट-घट अंतर जैन, मतमदिरा के पान सों मतवाला समझे न**' अपने अभिप्राय में पागल हो गये है तब वस्तु क्या चीज है यह समझते नहीं, कोई कहता कि राग करना है एवं राग करते-करते होगा ! - ऐसा करने से होगा ! निमित्त

से होगा ! आहाहा !

यह जिनस्वरूपी भगवान आत्मा यह समयसार नाटक का शब्द है। घट-घट अंतर जिन वसे, यह जिन आत्मा - ऐसा कहकर आत्मा जिनस्वरूपी कैसा है ? आहाहाहा ! कि जैन अर्थात यह जिन स्वयं जैनरूप सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमित हो यह वीतरागी रूप परिणमे वह आत्मा। समझ में आया ? आहाहाहा ! (श्रोता :- अंगुली से चन्द्रमा बताया सो अंगुली को देखना नहीं चन्द्रमा देखना) नहीं यह अंगुली तो भिन्न वस्तु हुई। यह तो अंदर से भेद से बताया, तब भेद को बताना नहीं। भेद अभेद को बताते हैं, कहनेवाले का आशय भी - ऐसा है कि हम भेद से कहते हैं, परंतु हमें भी भेद का अनुसरण करना नहीं, और तुम्हें हम कहते हैं कि प्रभु अंदर द्रव्य जो वस्तु है अंदर जिनस्वरूपी अनादि अनंत आनंद कंद प्रभु ध्रुव जो आत्मा परम सामान्य इसको हमें बताना है, तब उसको बताने में जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र के भेदरूप जो परिणमे, यह कहकर बताना है अभेद। उस दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप परिणमे तब दर्शन, ज्ञान, चारित्र को बताना है - ऐसा नहीं। आहाहा ! दर्शन, ज्ञान, चारित्र को जो प्राप्त हो। आहाहा ! गजब बात है अमृतचन्द्राचार्य एक हजार वर्ष पहले (हुये) कुन्दकुन्दाचार्य दो हजार वर्ष पहले (हुये) और यह टीकाकार एक हजार वर्ष पहले (हुए)। ओहोहो ! उस समय श्वेताम्बर पंथ तो निकल चुका था, कुन्दकुन्द आचार्य के समय निकल चुका था। आहाहाहाहा ! परंतु ऐसी (उत्कृष्ट) वाणी कहनेवाले थे, उनकी भी परवाह नहीं की, संप्रदायवालों ने ?

यहाँ भगवान की भक्ति करे और भगवान का स्मरण करे, वह आत्मा - ऐसा नहीं कहा। आहाहा ! जिनेश्वरदेव का भक्त हो, यह आत्मा - ऐसा ही नहीं कहा। आहाहा ! यहाँ तो प्रभु उस तरफ का लक्ष्य करने से... लक्ष्य तो वहाँ करना है, दर्शन-ज्ञान-चारित्र का लक्ष्य करना नहीं, वह द्रव्य ज्ञायक स्वरूप एक है, इसका लक्ष्य करने से दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पर्याय उत्पन्न होती है, तब यह पर्याय भेद से भी (जो) प्राप्त होता है - ऐसा आत्मा कहना है, समझ में आया ? आहाहाहा ! यह आठवीं गाथा। बापू ! यह व्याख्यान तो उन्नीसवीं बार चलता है और व्यक्तिगत तो सैकड़ों बार पढ़ा है, अंदर में तो..... आहाहाहा !

भगवान आत्मा अनंत अनंत गुणों का एकरूप धर्मी उसको अमुक दर्शन, ज्ञान, चारित्र धर्म से... धर्म को धर्मी प्राप्त होता है - ऐसा लिया, मुख्य असाधारण धर्म को लिया, असाधारण शब्द लिया न भाई ? असाधारण धर्म को बताना है। आहाहाहा ! तब असाधारण धर्म ये, कि दर्शन, ज्ञान, चारित्र, किसी दूसरी चीज में नहीं, कोई दूसरे जीव में है नहीं। ओहो !

ऐसा जो सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र, है पर्याय है भेद परंतु वह वस्तु इसको प्राप्त करे उसको आत्मा कहते हैं। तब श्रोता का लक्ष्य दर्शन, ज्ञान, चारित्र के परिणमन ऊपर नहीं, यह दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप परिणमनेवाला आत्मा वहाँ लक्ष्य है। आहाहाहा ! समझ में आया ? समझ में आये उतना समझना बापू ! यह तो तीनलोक के नाथ जिनेश्वर देव सीमंधर प्रभु उनके पास गये थे सम्वत् उन्नचास में आठ दिन रहे थे, यह वाणी है वहाँ की, आहाहाहा ! ऐसी वाणी कहीं भरतक्षेत्र में है नहीं कहीं। आहा-ओहोहोहोहो !

क्या कहते हैं ? कितना स्पष्टीकरण कर दिया है। व्यवहाररूप परिणमे यह आत्मा नहीं। तब व्यवहार से निश्चय हो - यह तो है ही नहीं, परंतु जो निश्चय वस्तु है ज्ञायक, यह दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप परिणमे उसरूप परिणमे वह आत्मा, परिणमे वह पर्याय आत्मा - ऐसा नहीं। समझ में आया ? आहाहाहा ! अरे - ऐसा मनुष्य भव उसमें यह वीतराग त्रिलोकनाथ की वाणी... आहाहा ! सनातन सत्य दर्शन। आहाहा !

गुरु ने शिष्य से आत्मा कहा तब शिष्य तो आत्मा किसको कहते हैं, इसको समझने की जिज्ञासा में खड़ा है, दूसरी कोई चीज नहीं, यह क्या कहते हो ? हम समझते नहीं प्रभु, तुमने आत्मा कहा परंतु आत्मा क्या ? किसको आत्मा कहना ? तब गुरु कहते हैं (कि) भाई जो चीज है... आनंद का नाथ प्रभु शुद्ध स्वरूप स्वभाव वस्तु जो परिणमन में आती है तो दर्शन-ज्ञान में आती है, तब दर्शन-ज्ञान-चारित्र से, पर्याय से तुमको बताते है कि यह पर्याय परिणमे परंतु परिणमनेवाला वह आत्मा। देवीलालजी ! समझ में आये उतना समझना भाई। यह तो उसकी पूरी बात श्रुतकेवली कह सकें। आहाहाहा !

यह बात मूल रकम की बात है, दर्शन, ज्ञान, चारित्र को (प्राप्त हो) फिर टीकाकार ने सरल हिन्दी अर्थ किया, परंतु उसका अर्थ ही यही कि त्रिकाल रहनेवाली चीज यह वर्तमान में अंदर ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप परिणमे वह आत्मा। ***वस्तु त्रिकाल है परंतु यहाँ तो उसको परिणमनेवाला यह सदा ले लिया है अर्थकार ने कि सदा वह दर्शन, ज्ञानरूप परिणमे यह परिणमे वह आत्मा, इस परिणमन ऊपर तुम्हारी दृष्टि नहीं होना चाहिए, परिणमे वह आत्मा वहाँ तुम्हारी दृष्टि होना चाहिए। प्रेमचन्द्रजी*** ! यह बात सुनी थी वहाँ ? रात को कहते थे कि हम गुजराती समझ कर आयेंगें। अच्छी बात कही। आहाहा !

ऐसा जब सुना, कैसे शब्द ? प्राप्त हो वह आत्मा है, वहाँ वजन है, वजन कहाँ है कि **`दर्शन-ज्ञान-चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा'** तब - ऐसा सुना... आहाहा ! शिष्य को आत्मा का अर्थ... लक्ष्य कराने को यह आत्मा (जो) दर्शन, ज्ञान, चारित्र

को प्राप्त हो यह आत्मा - ऐसा कहा तब एकदम तत्काल दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप प्राप्त होनेवाला आत्मा, उसके ऊपर उसकी दृष्टि गई। आहाहाहा ! समझ में आया ?

तब श्रोता (भी) - ऐसा लिया है कि उन्होने कहा और उसकी दृष्टि एकदम आत्मा ऊपर गई। समझ में आया ? कोई विशेष माँग नहीं, विशेष स्पष्टीकरण करो यह भी नहीं। बस यह (इतना) कहा। प्रभु आप आत्मा किसको कहते हैं, हम समझ सकते नहीं, तब प्रभु सुन ! आहाहा ! ***अंदर भगवान जिनस्वरूपी प्रभु जिसको आत्मा कहो, जिन कहो, ध्रुव कहो, सामान्य कहो, एकरूप कहो, नित्य कहो, यह ही आत्मा, अनित्य ऐसे भेदरूप दर्शन, ज्ञान, चारित्ररूप प्राप्त हो।*** आहाहा ! क्या कहा ? चारित्र को जो प्राप्त, उसको आत्मा प्राप्त हो - ऐसा यहाँ नहीं कहा है। ऐसे तो यहाँ दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो, उससे आत्मा प्राप्त हो - ऐसा कहा नहीं। आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो यह आत्मा (- ऐसा कहा) आहाहा ! गजब बात है।

भरत क्षेत्र में समयसार सिद्धांतशास्त्रों में शिरोमणि है। आहाहा ! अरे ऐसी भेंट दे गये प्रभु, कुन्दकुन्दाचार्य बना कर भेंट दे गये। लो प्रभु आगे है, जयसेनाचार्य की टीका में। समयसार बनाकर भेंट दिया। आहाहा ! कहते हैं स्वीकारो नाथ अब स्वीकारो, आहाहा ! भेंट दी यह स्वीकारो नहीं ? आहाहा !

इसप्रकार तुम्हारे आत्मा में, आहाहा ! ऐसी पर्याय में प्राप्त हो, आहाहा ! दर्शन, ज्ञान, चारित्र से आत्मा प्राप्त हो - ऐसा नहीं कहा। यहाँ तो दर्शन-ज्ञान-चारित्र को जो प्राप्त हो, जो प्राप्त हो आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो, तब सुननेवाले को वहाँ आत्मा ऊपर लक्ष्य कराना है, कि जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा। आहाहाहा ! यह सिद्धांत, यह सिद्धांत यह वीतराग की वाणी देखो न ! सत् का पुकार करती है। आहाहा ! प्रथम सम्यग्दर्शन। (श्रोता :- भले तीन बोल कहे परंतु साथ में तीनों आते ही है।) वस्तु जो है, उसके ऊपर दृष्टि जाने से दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पर्याय प्राप्त होती है। चौथे गुणस्थान में स्वरूप आचरण चारित्र होता है। समझ में आया ? ***सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और स्वरूपाचरण तीनों एक साथ हैं, तब इन तीनों को प्राप्त हो वह आत्मा तब उस श्रोता का लक्ष्य द्रव्य ऊपर जाता है। आहाहा ! जो पर्याय प्राप्त है उसके ऊपर लक्ष्य नहीं जाता, कारण कि प्राप्त कौन ? कि आत्मा।*** कि दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा, दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो। आहाहा ! समझ में आया ? आहाहा ! अर्थात वहाँ लक्ष्य, ध्येय आत्मा ऊपर कराना है - ऐसा ध्येय कहा, आहा ! जो भगवान आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पर्याय को प्राप्त हो। आहाहा ! ऐसे भेद से उसको समझाया, लेकिन समझाया तो आत्मा परंतु भेद से समझाया, तब भेद ऊपर लक्ष्य सुननेवाले को करना

नहीं और कहनेवाले का भी भेद ऊपर लक्ष्य रखना नहीं। आहाहा ! समझ में आया? आहाहा !

तब श्रोता जब सुनता है `तब' आहाहा ! तत्काल ही उसी समय, उत्पन्न होनेवाला आहाहा ! पर्याय में आनंद उत्पन्न होनेवाला, या सुनते ही तुरंत सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र प्राप्त होता है। आहाहा ! क्योंकि दृष्टि उसकी वहाँ कराई है और दृष्टि जब वहाँ द्रव्य ऊपर की तब परिणमन में दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पर्याय उसी समय (तत् क्षण) उत्पन्न होती है। आहाहाहा ! समझ में आया ? तब, उस समय - ऐसा सुनते समय, तत्काल ही, तत्काल ही है तुरंत ही, एकदम आहाहा ! यह अपनी बुद्धि से पढ़े तो कुछ समझ में आये - ऐसा नहीं, यह चीज ऐसी है बहुत गंभीर बहुत गंभीर ओहोहोहो ! पर्याय को प्राप्त हो वह आत्मा - ऐसा कहकर आत्मा ऊपर दृष्टि कराई है पर्याय ऊपर नहीं परंतु आत्मा ऊपर दृष्टि कराई, वहाँ तुरंत उसको दर्शन, ज्ञान, चारित्र की पर्याय को आत्मा प्राप्त हो गया। आहाहा ! समझ में आया? (श्रोता :- किसी किसी को होता है कि सभी को ?) यह कहीं यह बात ही नहीं, किसी किसी की बात नहीं। यहाँ तो होता है ऐसी बात है, नहीं होता तो ऐसे श्रोता को यहाँ लिया ही नहीं। आहाहा ! यहाँ तो होता ही है - ऐसा श्रोता लेना है। आहाहाहा !

संत - ऐसा कहते हैं कि हमने अपनी आत्मा का जो आगम कुशलता और अनुभव से सम्यग्दर्शन जो प्रगट हुआ है, हम पंचमकाल के छद्मस्थ हैं, भगवान के बाद तो एक हजार, पन्द्रह सौ वर्ष हो गये परंतु हम कहते हैं, सौगंधपूर्वक कहते हैं, कि हमें जो आत्मा का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ और सम्यग्दर्शन हुआ, हम पतित नहीं होंगे, इस सम्यग्दर्शन से हम केवलज्ञान लेंगें। आहाहाहाहा ! यह वाणी (गाथा) ३८ (समयसार) में है ७२ (प्रवचनसार) में है (श्रोता :- बिना गिरे हुये) आहाहाहा ! प्रभु तुम तो पंचमकाल के साधु, भगवान के पास गये नहीं न अमृतचन्द्राचार्य, तथा कुन्दकुन्दाचार्य तो गये थे, हम भगवान के पास गये थे। आहाहा ! तीनलोक का नाथ भगवान का भगवान, आहाहा ! भगवान है यह तो पर्याय है यह तो महा त्रिकाली स्वरूप भगवान है। आहाहा ! उनके पास हम गये थे एवं हमको जो दर्शन हुआ दर्शन ज्ञानादि चारित्र की पर्याय स्वरूपचरणरूप है। (जो) है वह अब पतित होगी - ऐसा नहीं। आहाहा ! हम सोगंधपूर्वक पंचमहाव्रत के धारी विकल्प से सत्य कहते हैं। ***हम अल्पज्ञ होने पर भी, पूर्णज्ञान, (पूर्ण) हुये बिना भी, पूर्ण ज्ञानी के पास पास गये बिना ही, पूर्णज्ञानस्वरूप (निज) भगवान के पास हम गये है, तब द्रव्य जैसे पतित होता नहीं, द्रव्य का जैसे अभाव नहीं होता, इसीप्रकार हमारे सम्यग्दर्शन***

का भी कभी अभाव नहीं होगा। आहाहाहा ! समझ में आया ?

वस्तु जो भगवान जिनस्वरूपी अनादिअनंत नित्यानंद प्रभु अंदर है यह कभी अन्यद्रव्य परद्रव्यरूप होता नहीं तब इस द्रव्य की हमको जो दृष्टि हुई है। आहाहाहा ! हम कहते हैं पचंमहाव्रतधारी, सत्य कहते हैं कि हमारा यह सम्यग्दर्शन अप्रतिहत है, गिरे नहीं - ऐसा है। आहाहा ! भले क्षयोपशम हो, परंतु क्षायक लेंगे और केवलज्ञान लेंगे - ऐसा हमारा सम्यग्दर्शन है, प्रभु परंतु तुम देह छोड़कर स्वर्ग में जाओगे न। वहाँ जायेंगे, परंतु हमारा दर्शन नहीं छूटेगा, वहाँ तो चारित्र में अस्थिरता होगी। आहाहा ! समझ में आया ? ओहोहो !

यह वाणी प्रभु की बापू कहाँ है यह ? अरेरे ! जो सुनने लायक चीज है एवं करने लायक चीज है, वह न मिले तो क्या किया उसने ? आहाहा !

कहो रतिभाई आहाहा ! यह एक पंक्ति का व्याख्यान चलता है। आहाहाहा ! हमारे भाई तो कहते कि आठवीं गाथा पहली बार सुनी (है) देवीलालजी ! (श्रोता :- ऐसा है जब सुनो तब नया-नया अलौकिक बातें है) हाँ ? अलौकिक बातें है, बापू ! प्रभु ! तुम्हारी बात विद्यमान भगवान मौजूद है न ? आहाहा ! विद्यमान मौजूद भगवान है और जिसकी हाजरी लेनी पड़ती नहीं कि तुम अमुक आये हो - ऐसा नहीं, यह तो है ही यहाँ। यह है दर्शन, ज्ञान, चारित्र को पर्याय में प्राप्त हो इतना भेद से प्रभु तुमको समझाते है, परंतु तुम भेद ऊपर लक्ष्य नहीं रखना। हम तो समझाते हैं आत्मा। आहाहा ! अपनी दृष्टि का जोर आत्मा ऊपर ले जाना परिणमन ऊपर लक्ष्य नहीं रखना, परिणमन से तो तुमको समझाया है। आहा ! समझ में आया ? आहाहाहा !

तब तत्काल ही उत्पन्न होनेवाला अत्यंत आनंद से... दो बातें लेंगे, ज्ञान और आनंद उत्पन्न हो गया बस दोनों बातें है ? तत्काल उत्पन्न होनेवाला अत्यंत आनंद, अत्यंत आनंद जो आया आनंद यह न जानेवाला। आहाहाहाहा ! स्वरूप की दृष्टि कराई... ऐसी चीज है यह तब दर्शन, ज्ञान, चारित्र को पर्याय प्राप्त हो वह आत्मा तब वहाँ दृष्टि ले गये... आहाहा ! अरे मध्यस्थ से सुने न ! ऐसे एकांत-एकांत पुकारकर करते हैं क्या बापू ? भगवान तुम भी भगवान हो भाई ! परंतु तुम्हारी दृष्टि में फर्क है, तब लगता है (कि) सोनगढ़ का एकांत है। एकांतवादी है, कहो प्रभु आहाहा ! बापा मार्ग तो यह है भाई। आहाहा !

अत्यंत आनंद से जिसके... आहाहा ! आनंद भी अत्यंत आनंद लिया भाई। आहाहा ! अतीन्द्रिय है न यह। आहाहा ! स्वरूप भगवान आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र को निर्मल पर्याय की प्राप्त हो वह आत्मा, पर्याय को प्राप्त हो वह आत्मा, हाँ। तब उस सुननेवाले की दृष्टि तत्काल द्रव्य ऊपर गई और दृष्टि जाने से तत्काल अत्यंत

आनंद उत्पन्न हुआ। आहा ! बाद में करेंगें, आप कहते हैं आत्मा की बात, बाद में प्रयत्न करेंगें ऐसी बात नहीं, थोड़ा बाद में अभ्यास करेंगे (बाद की बात नहीं)।

हमारे डॉक्टर ने प्रश्न किया था, है वैष्णव है न, परंतु है सरल, रुचि लगती है कलकता का है डॉ. गांगुली नहीं। बड़ा डॉक्टर है होम्योपेथी का। ब्रह्मचारी है बाल ब्रह्मचारी, सुन्दर, सुनने का रस लगा है तब आते है कभी कोई बुलाते हैं तो आते हैं व्याख्यान सुनने को आते हैं, व्याख्यान सुनने का रस (है) अरे ! प्रभु देख तो सही बापू यह वेदांत और वैष्णव और यह बात यह (मत पंथ) प्रभु यह परम सत्य है नहीं कहीं। आहाहा ! श्वेताम्बर जैन में नहीं है तो फिर अन्य मत को तो कहाँ से लागू (होगी) ? आहाहा ! यह सेठ लोग यह दिगम्बर में जन्म लिया परंतु कभी सुना तो नहीं था उन्होंने। नहीं। आहाहाहा !

नाँव तिरे रे मेरी नाँव तिरे, ऐसे आत्मा अंदर में खेल करे। हाँ ! मेरी नाँव अंदर में तैरने लगी, दृष्टि हुयी द्रव्य ऊपर, गुरु ने कहा कि यह आत्मा, हाँ। आहाहाहा ! उसका तत्काल दर्शन उत्पन्न हुआ। आहाहा ! परंतु काललब्धि पके तब होती है न - ऐसा कहते हैं न ? यह काललब्धि पक गई। आहाहा ! यह काललब्धि होगी तब होगी, परंतु उसका ज्ञान करे कौन ? इस समय जो लब्धि प्राप्त है यह तो ऐसी ही है उस समय उत्पन्न, परंतु उसका ज्ञान कौन करेगा ? इस द्रव्य ऊपर दृष्टि करे तब उसका ज्ञान होगा। आहाहाहा ! `अत्यंत आनंद से जिसके हृदय में'... उसकी आँखोंमें से आँसू आये थे, उसके `स्वस्ति', `स्वस्ति', स्वस्ति का अर्थ किया कि तुम्हारा अविनाशी कल्याण हो, वहाँ उसके आँख में आँसू आ गये, यहाँ तो हृदय में आत्मामें से आनंद आया। आहाहा !

- ऐसा कि तुम एकांत (करते) आत्मा से ही बस पर की अपेक्षा रखे बिना समझे... तब इस अपेक्षा तो कहते हैं व्यवहार की, परंतु व्यवहार से तो बताना वह है, व्यवहार से व्यवहार बताना नहीं, और व्यवहार का लक्ष्य करके निश्चय में आता है - ऐसा नहीं, यह दर्शन, ज्ञान, चारित्र है व्यवहार, परंतु उसके लक्ष्य से द्रव्य (अनुभव में) आता नहीं। वह तो जिसको प्राप्त होनेवाला आत्मा है, उसकी दृष्टि से दर्शन, ज्ञान प्राप्त होता है। आहाहाहा ! समझ में आया ? आहाहा !

अमृतचन्द्राचार्य जब टीका करते होंगे, उनका हृदय... आहाहा ! आनंद में उल्लसित हो गया है अंदर... एक विकल्प आया है, परंतु मैं कर्त्ता नहीं हूँ। इस विकल्प का कर्त्ता मैं नहीं, इस टीका का मैं कर्त्ता नहीं। मैं तो स्वरूपगुप्त हूँ न ! आहाहा ! मेरा स्वरूप राग में आता नहीं वह वाणी में आता नहीं। आहाहा ! मेरा स्वरूप तो राग और वाणी से अंतर में गुप्त है न ! आहा ! तब टीका हमसे हुई बिलकुल

नहीं, अकिंचित्कर है। अब उस निमित्त को अकिंचित्कर कहते हैं तब विरोध करते हैं - यह निमित्त को अकिंचित्कर कहते हैं। परंतु आचार्य स्वयं कहते हैं कि मैं अकिंचितकर हूँ, टीका करने में मेरा कुछ कार्य नहीं। आहाहाहा ! समझ में आया ?

अत्यंत आनंद से जिसके हृदय में, जिसके हृदय में अर्थात ज्ञान (में) आत्मा में, सुन्दर बोध, तरंग, आनंद और ज्ञान दोनों लिया, है न ! अत्यंत आनंद से जिसके हृदय में सुन्दर बोध तरंग अर्थात आनंद सहित ज्ञान हुआ, अकेला ज्ञान नहीं हुआ - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! अकेला ज्ञान, नहीं हुआ - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! अकेला ज्ञान, ज्ञान वह ज्ञान ही नहीं। आहाहा ! जिस ज्ञान के साथ में अतीन्द्रिय आनंद न हो वह ज्ञान नहीं। आहाहाहा ! क्या कहा देखो ? अत्यंत आनंद से जिसके हृदय में, प्रगट क्या हुआ ? `**सुन्दर बोध तरंग**' अत्यंत आनंद के साथ, आहाहा ! सुन्दर बोध तरंग, बोध अर्थात ज्ञान ज्ञान की तरंगें... आहाहा ! अंदर ज्ञान की धारा सम्यक् उत्पन्न हुई। आहाहा ! भेद ज्ञान की धारा उत्पन्न हुई राग से भिन्न और अपने स्वरूप से अभिन्न - ऐसी अनुभव की धारा उत्पन्न हुई। आहाहाहा !

परंतु उसने प्रश्न क्या किया ! पहले ज्ञान से उत्पन्न होकर आनंद- ऐसा न लिया, अत्यंत आनंद के साथ बोध तरंग उठी। आहाहाहा ! अनंतकाल में कभी अपना आनंद का स्वाद आया नहीं था, क्या यह अतीन्द्रिय आनंद स्वरूप है, इसका बोध नहीं था। यहाँ जब लक्ष्य द्रव्य ऊपर गुरु ने कराया... पर्याय ऊपर लक्ष्य नहीं, परिणति को प्राप्त हो - ऐसा यह आत्मा। आहाहा !

पहले चीज तो यह करने की है यह छोड़कर बाहर से सभी प्रतिमा लींया और ब्रह्मचर्य लिया प्रभु ! उससे यहाँ क्या लाभ होगा ? आहा ! उससे अभिमान हो जायेगा। हम त्यागी हैं, हम ब्रह्मचारी हैं, हम प्रतिमा धारी हैं, वैसे तो कोई आदर नहीं करे तो, हम तो त्यागी हैं... भाई। यह सम्यग्दर्शन बिना अभिमान हो जायेगा तुम्हें। आहाहा ! क्योंकि तुम्हारी महिमावाली वस्तु - ऐसा तो जाना नहीं तुमने और इस चीज को जानने से आनंद सहित ज्ञान की तरंग उठेगी, आनंद को अत्यंत शब्द से प्रयोग किया है, उसमें सुन्दर बोध तरंग, ऐसा लिया, सुन्दर बोध तरंग। आहाहा !

सुन्दर ज्ञान की तरंगे यह उत्पन्न होती हैं। अकेली ज्ञान तरंग ज्ञान की उत्पत्ती... जैसे पानी में तरंग उठती है न पानी में तरंग, इस प्रकार यहाँ सुन्दर बोध तरंग। आहाहा ! (श्रोता :- आनंद से उल्लसित ज्ञान) अत्यंत आनंद सहित का ज्ञान पहले आनंद लिया। आहाहाहा ! अत्यंत आनंद से जिसके हृदय में सुन्दर बोध तरंग, आहा ! उछलने लगती है। कहते हैं कि यह सम्यग्ज्ञान की तरंगे आनंद सहित उत्पन्न होती हैं। आहाहा ! यह भी तत्काल उत्पन्न होता है। आहाहाहा ! प्रभु तुम तो ऐसी चीज

लेते हो तुम भी अप्रतिहत और श्रोता भी - ऐसा लिया। आहाहाहा ! (श्रोता :- अत्यंत निकटवर्ती शिष्य) अत्यंत निकटवर्ती, नजदीक... सुनते है और संसार जिसका अल्प (और) निकट है। आहाहा ! (श्रोता :- धारणा में रुकनेवाला नहीं। यह बात यहाँ नहीं।

अतीन्द्रिय आनंद का नाथ प्रभु ! यह आत्मा दर्शन, ज्ञान, चारित्र पर्याय को प्राप्त हो आत्मा। तब यहाँ आत्मा ऊपर दृष्टि कराई। आहाहा ! तब अत्यंत आनंद उत्पन्न होकर, सुन्दर बोध तरंग उछलने लगती हैं, उछाल मारती हैं जैसे पातालमें से पानी फूटता है, पाताल में पानी बहुत है, ऊपर का पत्थर टूट जाये तब धारा निकलती है, यहाँ है गाम कौन गाँव कहा (जनड़ा, जनड़ा) ? वहाँ है वह हम कुँआ के पास निकली थी विहार करते समय कुँआ के पास से अठारह कोष पानी निकलने का अठारह भी, परंतु पानी, समाप्त होता नहीं इतना पानी निकलता है। जनड़ा यहाँ बोटाद के पास हम निकले कुँआ के पास। यहाँ पाताल कुँआ फूटा (- ऐसा) कहते हैं आहाहा ! जिसने अपनी दृष्टि द्रव्य ऊपर दी। आहाहा ! इस दृष्टि, ज्ञान और चारित्र में अत्यंत आनंद सहित बोध तरंगें उठती (है)। आहाहा ! समझ में आया ?

जिसके हृदय में, हृदय अर्थात ज्ञान में, आहाहा ! सुन्दर बोध तरंगें उछलने लगती हैं, उछलने लगती हैं। आहाहाहा ! अतीन्द्रिय आनंद सहित ज्ञान की धारा ज्ञान स्वभाव अंदर वस्तुमें से उछलती है आहाहा ! पातालमें से आती है अंदर पर्याय, तल-तलमें से आती है, तल... ध्रुव ऊपर दृष्टि होने से उसमें से ज्ञान तरंगे उठती है। आहाहा ! '**ऐसे यह व्यवहारी जन**' देखो समझ में आता है न नेमचन्द्रभाई ! भाषा तो सरल है भाव तो कोई अलौकिक है। कभी तुम्हारे व्यापार में आई नहीं, छह भाई इकट्ठे होकर बात करते थे, यह बात आये वहाँ ? व्यापार की बात चले, यह कारखाना डाला। आहाहा ! छह भाईयों है न ? यह तो सभी को होता है, आठ-आठ, बारह-बारह भाई होते हैं। परंतु यह बात बापू कहीं (नहीं) अरेरे !

अभी तो धर्म के नाम पर अदल-बदल (बदलावा) हो गया, हाँ। व्यवहार को करें और व्यवहार से होता है - ऐसा न मानों तो एकांत हो जाता है, प्रभु करो बापू व्रत करो तप करो, इन्द्रिय दमन करो - ऐसा करते-करते उससे तुम्हें निश्चय सम्यक् होगा, क्या यह पुण्य आस्रव सम्यग्दर्शन का कारण है। आहाहा ! कल ही आया है, २५ लाख का जम्बुद्वीप, हस्तिनापुर में बनवाती है एक मेरु पर्वत। आहाहा ! (वह कहती है) पुण्य आश्रव, पुण्य आस्रव से निश्चय होता है। आहाहा ! (- ऐसा नहीं भाई)

यहाँ तो आत्मा... रागरूप परिणमते है, उसे आत्मा ही नहीं कहते। आहाहा ! यह तो अनात्मा है यह तो आत्मा की जो चीज है अंदर में एकरूप जो परिणमती

है सम्यग्दर्शन ज्ञान तो उसको आत्मा प्राप्त हुआ - ऐसा कहा, आत्मा जो पर्याय को प्राप्त हुआ, कहा राग तो अनात्मा है। चाहे तो व्यवहार रत्नत्रय दया, दान, भक्ति का (राग) आता है यह दूसरी बात है। होता है अशुभ से बचने को, शुभ आता है परंतु है तो अनात्मा। पुण्य है, पुण्य यह कहीं आत्मा नहीं, नौ तत्त्वों में तो पुण्य तत्त्व भिन्न है, आत्मा भिन्न है, पुण्य तत्त्व भिन्न है। आहाहा ! समझ में आया ?

व्यवहारी जन, उस आत्मा शब्द के अर्थ को, आत्मा शब्द के अर्थ को, आत्मा के शब्द के भाव को वाच्य को अच्छी तरह समझ लेते है हाँ ? आहाहाहाहा ! आत्मा शब्द है तब इस शब्द में कहीं आत्मा है नहीं, आत्मा तो आत्मा में है। परंतु यह आत्मा शब्द कहने से आत्मा का अर्थ जो आत्मा है उसको समझ लेते हैं। आहाहा ! भाई इसका अभ्यास चाहिए। थोड़ा सत्य का परिचय चाहिए यह तो भाई ऐसी बात है यह। आहाहा ! व्यवहारीजन तो इस आत्मा शब्द के अर्थ को, पदार्थ को आत्मा शब्द के अर्थ को अर्थात आत्मा शब्द का अर्थ अर्थात् आत्मा नामक पदार्थ (को) अच्छी तरह समझ लेता है। आहाहा ! अच्छी तरह समझ लेता है। बदलाव बिलकुल नहीं - ऐसा। आहाहा ! भगवान आत्मा पूर्णानंद के ऊपर जहाँ लक्ष्य जाता है तब पर्याय में जो दर्शन ज्ञान हुआ यह यही अच्छी तरह परिणमन होगा और उसने अच्छी तरह आत्मा को जाना, संदेह रहित, दूसरे के पक्षपात बिना, कि दूसरे में भी कुछ होगा ! यहाँ यह मार्ग नहीं, एक ही मार्ग है (मार्ग) बस। आहाहा ! चैतन्य का अंतर लक्ष्य करके जो ज्ञान उत्पन्न होता है यह एक ही सत्य है। समझ में आया ? समझ लेता है।

इसप्रकार जगत म्लेच्छ के स्थानपर होने से जगत म्लेच्छ के स्थान। आहाहा ! व्यवहारनय भी म्लेच्छ की भाषा के स्थान पर... आहाहा ! दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो यह आत्मा, यह भी व्यवहार भाषा म्लेच्छ के स्थान पर है। आहाहा ! कोई दूसरा उपाय नहीं। (अभेद) कैसे कहना ? तब - ऐसा व्यवहार का भेद करना और समझाना, यह म्लेच्छ भाषा है, कहते हैं। आहाहा !

व्यवहारी जन भी म्लेच्छ भाषा के स्थानपर होने से, है न ? व्यवहारनय भी म्लेच्छ के स्थानपर जगत, सुननेवाला और व्यवहारनय भी म्लेच्छ (भाषा) के स्थानपर होने से दोनों, व्यवहारी जन है यह भी म्लेच्छ के स्थान में है, और भेद की भाषा भी कहना है वह भी म्लेच्छ की भाषा है व्यवहार। आहाहाहा ! जगत तो म्लेच्छ के स्थानपर होने से और व्यवहार नय भी म्लेच्छ भाषा के स्थानपर होने से व्यवहारी जन को क्या समझावें ? आत्मा-आत्मा कहें तो समझें नहीं तब भेद करके, यह भेद करना यह भाषा म्लेच्छ भाषा है, आहाहा ! ***दर्शन, ज्ञान, चारित्र यह भेद करके***

समझा यह म्लेच्छ भाषा है, गजब है। तब व्यवहार करने से तुम्हारा कल्याण होगा ! यह वस्तु कहाँ है ? आहाहा ! यह भाषा तो म्लेच्छ के स्थान में भी नहीं। आहाहा !

`जगत के जीव म्लेच्छ के स्थानपर होने से और व्यवहारनय भी म्लेच्छ भाषा के स्थानपर होने से परमार्थ का प्रतिपादन (करनेवाला) है' वस्तु का कथन करनेवाला है। यह आत्मा, `यह आत्मा' ! दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त `यह आत्मा'- ऐसा व्यवहार का... आहाहा ! `परमार्थ का प्रतिपादन करनेवाला है, इसलिये व्यवहारनय. स्थापित करने योग्य है,' ***व्यवहारनय है, व्यवहारनय नहीं है (- ऐसा) नहीं, और व्यवहारनय का विषय भेद है, व्यवहारनय को असत्यार्थ कहा अतः उसका विषय नहीं है - ऐसा नहीं यह तो त्रिकाल की दृष्टि कराने को पर्याय को भेद को असत्यार्थ कहा अभूतार्थ है तब यह गौण करके झूठा कहा। व्यवहारनय है - ऐसा स्थापित करने लायक है, परंतु आदरणीय नहीं।*** आहाहाहाहा !

स्थापित करने योग्य है व्यवहारनय है समझाने में व्यवहारनय से समझाना ऐसी म्लेच्छ भाषारूप व्यवहार है, आहाहाहाहा ! परंतु ब्राह्मण को म्लेच्छ नहीं हो जाना। ब्राह्मण को म्लेच्छ नहीं होना। स्वस्ति कहनेवाला यह म्लेच्छ भाषा से समझावें उसे भी स्वयं म्लेच्छ नहीं होना। आहाहा ! इस वचन से व्यवहारनय अनुसरण करने योग्य नहीं, स्थापन करने योग्य है, क्योंकि व्यवहार है, उसके द्वारा समझाते है परंतु आदरणीय नहीं। आहाहा ! गजब काम करते है न ! स्थापन करने योग्य है कि है, व्यवहार से समझाते है परंतु आदरणीय नहीं। आहाहा ! गजब काम करते हैं न, इसमें भी उस दिन था वह चिमन चक्कु कहता था... आठमी गाथा में (कहा है), चिमन चक्कु है न ? देखो इसमें व्यवहार से कहा, परंतु क्या कहा है ? व्यवहार समझाना यह म्लेच्छ को जैसे म्लेच्छ भाषा से समझाया इसीप्रकार व्यवहारीजन को व्यवहार भाषा से समझाया, परंतु समझाते है तो निश्चय, व्यवहार से समझाते तो व्यवहार का आश्रय लेना - ऐसा यहाँ है नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? इस कथन से व्यवहार अनुसरण करने योग्य नहीं। देखों पाठ में है न ? व्यवहारनयो नानुसर्तव्यो संस्कृत में है कहनेवाला यहाँ व्यवहार में आया, विकल्प आदरणीय अनुसरण लायक नहीं। आहाहा ! विशेष कहेंगे। (प्रमाण वचन गुरुदेव !)